संवाद

महिला सशक्तता और कानून

सुमन नलवा

जैसी ही मैंने अपने अनुभव लिखने के लिए कम्प्यूटर चालू किया वैसे ही मेरे सहायक ने मुझे इत्तला दी कि एक महिला मुझसे मिलना चाहती है। कुछ ही पल में एक खुशनुमा भाव वाली औरत हाथ में मिठाई का डिब्बा लिए मेरे सामने खड़ी थी। उसके चेहरे पर नज़र पड़ते ही मुझे याद आया कि वह आठ माह पहले अपनी तेईस वर्षीय शादी में होने वाली घरेलू हिंसा की शिकायत लेकर मेरे पास आई थी। उस समय उसके कूल्हे की हड्डी में दरार, चेहरे पर चोट के निशान और दिल में मायूसी थी। पर आज उसके चेहरे पर आत्मविश्वास और खुशी देखकर मुझे बहुत अच्छा लगा। वह मुझे और मेरे महिला कक्ष के साथियों को धन्यवाद देने आई थी। उसने बताया कि उसने एक नए सिरे से जीवन जीने का इरादा कर लिया है।

इस महिला का केस अदालत में न जाने कितने साल चलेगा और उसका फ़ैसला क्या रहेगा यह भी हमें पता नहीं है। पर मुझे हम सबकी जीत इसी बात में नज़र आती है कि आज एक औरत अपनी ज़िंदगी दोबारा शुरू कर रही है— उसे उम्मीद और खुद पर विश्वास हो गया है।

महिलाओं के साथ होने वाले सामाजिक गुनाह जो अपराध की श्रेणी में आते हैं में घरेलू प्रताड़ना, दहेज की मांग, उत्पीड़न, भ्रूण हत्या, यौन हिंसा आदि शामिल हैं। समाज ने अपनी दोषनिवारक भूमिका को नज़रअंदाज़ कर दिया है इसलिए इस मुद्दे को सम्बोधित करने के लिए पुलिस बचाव, छानबीन और प्रतिकार के तरीक़े अपना रही है। ऐसे कदम उठाए जा रहे हैं कि कानून का उल्लंघन न किया जा सके और अगर ऐसा हो तो अपराधी को सज़ा मिले और गुनाह दोबारा न किया जाए। पर इस लक्ष्य को पूरा करने के लिए पुलिस को विभिन्न पणधारियों जैसे समुदाय, गैर सरकारी संगठन, सरकारी इकाइयों के साथ भागीदारी और गठजोड़ की ज़रूरत है जिससे आपराधिक न्याय तंत्र प्रताड़ित वर्ग को अधिक सहयोग और जवाबदेही प्रदान करने में सक्षम बने।

पुलिस की मुख्य भूमिका है समाज में कानूनी व्यवस्था बनाये रखना और अपराधों की जांच-पड़ताल व रोकथाम। मेरे अनुसार यह एक बेहद सतही भूमिका है। पुलिस में अपनी सेवा के दौरान मैंने देखा है कि एक सहानुभूतिपूर्ण सुनवाई और संवेदनशील रवैया पीड़ित को एक आशा की किरण दिखा देता है, उसमें न्याय के प्रति विश्वास जगाकर जीने का हौसला प्रदान करता है। पुलिस सेवा के 15 वर्षों में मैंने पुलिस सक्रियता, लापरवाही, बेरूखी सभी महसूस की हैं। मैंने जाना है कि हम अपने नज़रिये में बेहद कानूनी होकर अपने दायरों में रहकर भी मानवीयता के साथ काम कर सकते हैं। इस भावना के बगैर हम समाज में अपना पूरा योगदान नहीं दे सकते।

मेरा यह भी मानना है कि हम कानून के कार्यान्वयन में निश्चित मार्गदर्शक नहीं हो सकते

क्योंकि यह एक पुलिस अफ़सर के ऊपर निर्भर करता है कि वह कानून को अपनी समझ के अनुसार लागू करे। ये समझ-बूझ, संस्था के मूल्य और रोज़मर्रा के व्यवहार ही इस बात को तय करते है कि एक प्रताड़ित महिला को क्या सहयोग और मदद मिलेगी। इस पूरी व्यवस्था में एक लिंग संवेदी रवैया और सहयोग सुनिश्चित कर पाना बेहद मुश्किल है और जब तक अफ़सरों में महिलाओं के प्रति संवेदनशीलता और प्रतिबद्धता नहीं होगी तब तक पीड़ित को न्याय नहीं मिलेगा।

हमारे समाज में पुलिस व जनता के बीच एक गहरी खाई है। महिलाएं पुलिस के पास हिंसा की रिपोर्ट लिखवाने से कतराती हैं। उस पर पुलिस का असहयोगपूर्ण व्यवहार उसे हताश कर देता है। थानों में निम्न ओहदों पर तैनात पुलिसकर्मी इस अरक्षित वर्ग के साथ नाइंसाफ़ी करते रहते हैं। उनकी लापरवाही, असक्रियता, शिकायतों की पड़ताल न करने की आदत व अपराधियों के साथ मिली-भगत कुछ ऐसी समस्याएं हैं जिन पर कार्यवाही करना बेहद ज़रूरी है।

पुलिस व्यवस्था में एक महिला अफ़सर होने की अपनी अलग चुनौतियां हैं। मुझे पंजाब पुलिस अकादमी में अपना पहला दिन आज भी याद है। अपने समूह में मैं अकेली औरत थी। प्रशिक्षण के शारीरिक मानक मेरे लिए बहुत कठिन और चुनौतीपूर्ण थे। पर मेरे प्रशिक्षक ने मुझे समझाया, 'मैडमजी यहां पर आप एक पुलिस अफ़सर हैं जिसे अपनी टीम का नेतृत्व करना है।' उस दिन से आज तक ऐसा ही रहा है। कभी-कभी घर और काम के बीच तालमेल मुश्किल हो जाता है। पर जीवन इसी का तो नाम है। सीखना और आगे बढ़ना।

पुलिस सेवा ने मुझे एक सामाजिक पहचान और अपनी मर्ज़ी के अनुसार जीने की आज़ादी दी है। पर मेरा मानना है कि सशक्तता एक मानसिक रवैया है जो हौसले, प्रतिबद्धता और आत्म-विश्वास से आता है। मैं अपने आसपास की महिला दोस्तों को देखती हूं जो भावनात्मक, मनोवैज्ञानिक, आर्थिक और शारीरिक उत्पीड़न ख़ामोशी से सहती रहती हैं, विरोध नहीं करती। शायद बहुत कुछ उनके आत्मविश्वास, सामाजीकरण और आसपास मौजूद सहयोगी ढांचों की गैर मौजूदगी के कारण है जो उन्हें अरक्षित और मजबूर बना देते हैं।

महिला अपराध शाखा में अपने लम्बे समयकाल में मैंने बहुत सारी घटनाएं देखी-सुनी हैं जहां औरतों के साथ अन्याय हुआ है। पर मुझे आज भी सबसे अधिक हैरानी औरतों की सहनशक्ति पर होती है। वे कभी बच्चों के नाम पर, कभी माता-पिता की खातिर और कभी इज़्ज़त के लिए ज़लालत सहती रहती हैं। हमें यह समझने की ज़रूरत है कि दर्द अपने आप कम नहीं होता। समस्या खुद-ब-खुद हल नहीं होगी। हमें महिलाओं के लिए एक प्रगतिशील नज़रिया और पूरा सहयोग प्रदान करने वाला सहयोगी तंत्र तैयार करना होगा। कितनी ऐसी औरतें हैं जो हमारी मदद तब तक नहीं मांगती जब तक माता-पिता, भाई-बहन और मायके वाले उन्हें सहारा नहीं देते। किसी भी सामाजिक सुरक्षा, आश्रयघर, आर्थिक साधन के अभाव में औरत अपने पांव पर खड़ी नहीं हो सकती चाहे उसे कितनी भी कानूनी सहायता क्यों न मिल जाए।

बदलाव की हवा चल चुकी है। नए कानून, नई नीतियां बन रही हैं। पर मूल चुनौती है औरत को सशक्त बनाने की। केवल आर्थिक स्तर पर नहीं बल्कि भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक स्तर पर भी। तभी सही मायने में समाज में परिवर्तन नज़र आयेगा।

सुमन नलवा *दिल्ली पुलिस की महिला व बच्चों के लिए विशेष शाखा में अतिरिक्त डीसीपी के पद पर कार्यरत हैं।*